स्वाधीन कलम नेपाली

डॉ. दिवाकर चौधरी

"मेरा धन है स्वाधीन कलम
तुझ सा लहरों में बह लेता,
तो मैं भी सत्ता गह लेता
ईमान बेचता चलता तो,
मैं भी महलों में रह लेता।"[1]

डॉ० सतीश कुमार राय ने नेपाली जी के व्यक्तित्व और कृतित्व पर विचार करते हुए, उस पर नेपाली जी के पिता और पारिवारिक पृष्टभूमि के अवदान की चर्चा करते हुए लिखा है- "शौर्य के भीतर से ही सौंदर्य का संगीत फूटता है। जिस बदल में जितना अधिक जल होता है उसमे उतनी ही अधिक बिजली होती है। नेपाली के सन्दर्भ में ये पंक्तियाँ पूरी तरह सार्थक प्रतीत होती है।"[2]

वे एक स्वाधीनचेता व्यक्ति थे। उन्होंने अपने जीवन में सिद्धान्तों से कभी समझौता नहीं किया। आर्थिक दृष्टि से नेपाली का जीवन विपन्नता के सागर में डुबता उतराता ही रहा। महंत धनराजपुरी (प्रसिद्ध शिकार साहित्य के लेखक, कवि, राजनीतिज्ञ, चम्पारण हिन्दी साहित्य सम्मलेन के भू०पू० अध्यक्ष) (इन्होने अपने अकाटय तर्कों से भैंसालोटन को वाल्मीकिनगर की संज्ञा दिलायी) गोपाल सिंह नेपाली की 'सरस्वती' पत्रिका में प्रकाशित एक रचना की नवीनता और अभिव्यक्ति की अपूर्व व्यंजकता पर मुग्ध होकर उनसे मिलने पहुँचे। उन्होंने नेपालीजी की आर्थिक विपन्नता के संबंध में लिखा है- "उन्हें गरीब सुन रखा था। किन्तु, उनकी निर्धनता इस कोटि की निर्धनता है; इसकी तो मैंने कल्पना नहीं की थी। वे खाना खाकर शायद सोने की तैयारी में थे। वे सिर्फ एक लँगोटा पहने हुए थे और उनकी आँखें झुकी हुई थी। एक क्षण के लिए मैंने कोठरी पर एक सरसरी निगाह डाली। अलगनी पर एक फटी कमीज और एक मैली धोती लटकी हुई थी। और कोठरी में कुछ पुस्तके भिखरी पड़ी थी। बिछावन में एक फटा हुआ दरी का टुकड़ा था, जिस पर शायद तकिये के काम के लिए कुछ पुस्तके पड़ी हुई थी। एक पीतल का गिलास भी कोने में पड़ा हुआ था। बस, कोठरी में कुल इतने ही सामान थे।"[3]

स्वयं नेपाली ने लिखा है- "गरीबी बड़ी प्यारी चीज है। वह भी लड़कपन या बुढ़ापे में नहीं, भरी जवानी में। लड़कपन में यह संगिनी मिली, तो बालहठ कुंठित हो जाता है; बुढ़ापे में आई, तो सर्द आहे जारी होती है, पर कहीं यौवन-काल में मिल गई तो भरे हुए सीने की कठोर परीक्षा रहती है। इसलिए मामला शीघ्र समाप्त नहीं होता। इसी राह के हम मुसाफिर है।"4 फिर भी उन्होंने अपमी गरीबी को कभी तरजीह न दी। प्रेम, मस्ती व उल्लास के गीत गाते रहे। ईमानदारी और दृढ़ता उनके व्यक्तित्व की खास पहचान है-

"अपनापन का मतवाला था
अँधेरों में भी खो न सका
ऐसो से घिरा जनम भर में
सुख-शय्या पर भी सो न सका

अपने प्रति सच्चा रहने का
जीवन भर हमने यत्न किया
देखा-देखी हम जी न सके
देखा-देखि हम मर न सके।।"[5]

स्वाभिमान तो जैसे उनके जीवन और व्यक्तित्वा का स्रोत था। जिसके सहारे वे विपन्नता के अथाह सागर को ताउम्र पार करते रहे। उन्होंने गलत को कभी स्वीकृत नहीं किया वरन प्रबल विद्रोह किया। "1935 में अखिल भारतीय हिंदी साहित्य सम्मलेन के इंदौर अधिवेसन की स्थायी समिति के सदस्यों का जब चुनाव हो रहा था, तो अध्यक्ष गाँधीजी चरखा चला रहे थे और उनकी जगह प्राचार्य खन्ना मनमाने ढंग से पक्षपात कर रहे थे। नेपालीजी से बर्दाश्त नहीं हुआ और उन्होंने पुछा था- "महात्माजी, सभापति आप है या प्रिंसिपल खन्ना।" बापू ने खन्ना को डाँटते हुए मंच से निचे उतर कर जब खुद चुनाव कराया, तो नेपाली जी रिकॉर्ड मतों से विजयी हुए।"[6]

यह उनके स्वाभिमानी व्यक्तित्व का ही प्रभाव है कि उनकी सत्ता से हमेशा दूरी बनी रही-

"मतवाला जग उस ओर चला
मतवाले हम उस ओर चले
बस एक जगह हम मिल न सके
जग से हमसे दो दिन न बनी
हम से बाजी जीती न गई
जग से बाजी हारी न गई।"[7]

हाजिरजवाबी उनके व्यक्तित्व की खास पहचान थी। नेपाली मंच के कवि थे और मंचीय कवि के लिए यह एक अत्यावश्यक गुण है- "राजेंद्र कॉलेज, छपरा के एक कवि सम्मलेन में राष्ट्रकवि 'दिनकर' ने 'मेरे नगपति, मेरे विशाल' कविता का पाठ किया था। जब नेपालीजी की बारी आई तो उन्होंने एक ऐसी कविता पढ़ी, जिसमे दिल्ली, पटना, पेशावर की चर्चा थी। दिनकर जी ने मजाक किया था- "वाह-वाह! यह कविता है या जियोग्राफी!" नेपालीजी ने तपाक से कहा " जी! आपने हिस्ट्री सुनाई थी, मैंने जियोग्राफी सुना दी!" ऐसे ही आकाशवाणी दिल्ली के प्रोड्यूसर पं। इलाचंद्र जोशी द्वारा आयोजित राष्ट्रीय ख्याती के कवि सम्मलेन में जब आचार्य जानकी वल्लभ शास्त्री की बारी आई तो उन्होंने निवेदन किया कि उनका काव्य-पाठ ध्यानपूर्वक सुना जाए। बगल में बैठे नेपालीजी ने कहा था- "मैं तो सदा की भाँति आज भी आपकी रचनाएँ मनोयोग से सुनुंगा।" भारी भरकम कद-काठी वाले शास्त्री जी की आवाज अत्यंत पतली, मीठी और सुरीली थी। काव्य-पथ के बाद वीररस के प्रख्यात कवि श्यामनारायण पाण्डेय ने नेपालीजी से पुछा था- "क्यों भाई! कैसी लगी शास्त्री जी की कविता।" नेपाली जी ने मुस्कान बिखेरते हुए कहा था- "बहुत खूब! ऐसा लग रहा था जैसे हाथी सीटी बजा रहा हो!"[8]

उपर्युक्त प्रसंगों से नेपालीजी की हाजिरजवाबी और उनके विनोदप्रिय व्यक्तित्व की झलक मिलती है। एक बार जो उमसे मिल लेता, आजीवन उनका हो जाता। ऐसा सरल, सरस, निश्छल और प्रभावशाली वुँक्तित्व था नेपालीजी का। इनके कृतित्व और व्यक्तित्व में इतना बेहतरीन सामंजस्य था कि मंच पर इनके सम्मुख टिक पाना असंभव हो जाता था। सिनेमा-संसार में इन्होंने खूब नाम और पैसा कमाया, पर फिल्म-निर्माण और दुनियादारी के प्रति असर्तकता और अपरिग्रह की प्रवृत्ति ने इन्हें जीवन के आखिरी दिनों में पुनः विपन्नता के अथाह सागर में धकेल दिया। भगवती प्रसाद द्विवेदी ने लिखा है कि-

"गीतकार रामनाथ अवस्थी ने जब इस बाबत कुछ कहा तो नेपाली जी ने छूटते ही कहा- "अरे बंधू! मैं मूलतः एक कवि और कलाकार हूँ। पैसे-रूपये के प्रति तो व्यापारी और सौदेबाज सजग होते है। मैंने कमाया, उसे खर्च भी मैं ही कर सकता था, वही किया। आई एम नाट सॉरी फॉर एनीथिंग।" ऐसी फक्कड़ता भला किसे प्रभावित नहीं करती।"[9]

इसके बावजूद नेपाली जी झुकते नहीं बल्कि उनका व्यक्तित्व और दृढ़ होता है। इसी समय का एक वाकया उनके व्यक्तित्व निर्देशन के संदर्भ में प्रासंगिक है। "एक बार मशहूर फिल्म 'नागपंचमी' के निर्माता-निर्देशक विनोद देसाई ने एक फिल्म बनाने की घोषणा की। उनकी पत्नी वीणा जी ने तांगे से जाने के लिए कुछ रूपये देकर उनके यहाँ भेजा कि उसके गीत उनसे लिखवाए। देर रात नेपाली जी के लौटने पर पत्नी ने पूछा तो उन्होंने कहा-"झुकना मुझे स्वीकार नहीं है। मित्र हैं तो उन्हें भी पता होना चाहिए, मैं किस हाल में हूँ।"[10]

नेपालीजी के व्यक्तित्व की यह विशेषता वर्तमान अवसरवादी परिवेश में जहाँ जरुरत परने पर गदहा को भी बाप बना लिया जाता है। अवश्य ही उनके व्यक्तित्व की कमजोरी मानी जाती। महात्मा गाँधी ने लक्ष्य की प्राप्ति के लिए साधन की शुद्धता पर जोर दिया था। राष्ट्रकवि 'दिनकर' ने भी- 'उर्वशी' में लिखा है-

"नर का भूषण विजय नहीं
केवल चरित्र उज्जवल है
कहती हैं नीतियाँ,
जिसे भी विजयी समझ रहे हो
नापो उसे प्रथम उन सारे
प्रकट गुप्त यत्नों से
विजय-प्राप्ति कम में उसने
जिनका उपयोग किया है।"[11]

पर वर्त्तमान में हमारा समाज साधन पर नहीं वरन लक्ष्य पर केन्द्रित है। जहाँ रास्तों की कोई अहमियत नहीं, सफलता ही सब-कुछ है। शायद यही कारण है कि आज नेपाली जी जैसे स्वाभिमानी व्यक्तित्व के धनी साहित्यकारों को अतीत के गर्त में धकेल दिया जाता है। उनकी प्रासंगिकता पर प्रश्न चिह्न लगाये जाते हैं। आलोचकगण सत्तासेवी साहित्यकारों की चाटुकारिता कर खुद के आलोचना कर्म की इतिश्री समझ लेते है। नेपाली जी के स्वाभिमानी व्यक्तित्व की छाप उनकी रचनाओं में सर्वत्र दिखती है साथ ही अनेक अवसरों पर उनके स्वाभिमान से जुड़े किस्से पढ़ने-सुनने को िल जाते है। अजय कुमार पाण्डेय ने लिखा है- "1960 में मुजफ्फरपुर में एक हाईस्कूल की हरेक जयंती के अवसर पर एक कवि सम्मलेन का आयोजन हुआ। उसी दिन पूर्व राष्ट्रपति और तत्कालीन राज्यपाल डॉ। जाकिर हुसैन एक महिला कॉलेज के समारोह में आये थे। नेपाली जी के काव्य-पाठ की चर्चा सुनकर उन्हें परिक्रम सदन आकर कविता सुनाने के लिए सन्देश भेजा। नेपाली जी ने बड़ी विनम्रता से इनकार करते हुए कहा- "राज्यपाल महोदय मुझे सुनना चाहते है, यह मेरा सौभाग्य है। किन्तु मैं परिक्रम सदन में कविता सुनकर कवियों की उज्जवल परंपरा को कलंकित नहीं करना चाहता। आज फिर जनता के आग्रह पर तिलक मैदान में मेरा काव्य-पाठ है। महामहिम वहाँ पधारें तो मैं उनका आभारी रहुँगा। डॉ० जाकिर हुसैन ने उस कार्यक्रम में शिरकत की और एक सामान्य श्रोता की हैसियत से काव्य-पाठ का रसास्वादन किया। नेपालीजी से जुड़े ये वे प्रसंग है जो आज की तारीख में काफी महत्वपूर्ण है।"[12]

निष्कर्षतः नेपालीजी के व्यक्तित्व पर सम्पूर्णता से विचार करने पर हम पाते हैं कि उनके व्यक्तित्व में आग और राग दोनों हैं। वे एक स्वाधीनचेता, स्वाभिमानी, साहित्यकार और राष्ट्र-प्रेमी थे। जिसकी अभिव्यक्ति सिर्फ रचनाओं में ही नहीं व्यवहार के कठोर धरातल पर भी देखने को मिलती है। अपने समकालीनों के बीच उनके व्यक्तित्व की अपनी छाप थी। अपने व्यक्तित्व की सरलता, सहजता, निश्चलता, जैसे गुणों के कारण उन्हें जीवन में कई तरह के संकटों का सामना करना पड़ा। तब भी उनका व्यक्तित्व दृढ़ से दृढ़तर होता, निखरता गया। उन्होंने वैचारिक और व्यवहारिक स्तर पर गलत से कभी समझौता नहीं किया। उनके व्यक्तित्व पर कई तरह के आक्षेप भी लगाये गए तब भी वे रुके नहीं, हाँ, मर्माहत जरुर हुए। तब भी गाते रहे-

"जिसने तलवार शिवा को दी,
रोशनी उधार दिवा को दी।
पतवार थमा दी लहरों को,
खंजर की धार हवा को दी।
अग-जग के उसी विधाता ने,
कर दी मेरे आधीन कलम।
मेरा धन है स्वाधीन कलम।।"[13]

संदर्भ सूची :

1. आजकल, नवम्बर 2011, पृष्ठ-9
2. परिषद- पत्रिका, मार्च 2000, पृष्ट-8
3. स्वर-संधान, रागिनी, पृष्ट-6
4. परिषद-पत्रिका, मार्च 2000, पृष्ट-2
5. आजकल, नवम्बर 2011, पृष्ट-18
6. जग से हमसे दो दिन न बनी, पंचमी, पृष्ट-124
7. आजकल, नवम्बर 2011, पृष्ट-18
8. उपरिवत, पृष्ट-18
9. उपरिवत, पृष्ट-29
10. उर्वशी, पृष्ट-115
11. आजकल, नवम्बर 2011, पृष्ट-29
12. मेरा धन है स्वधीन कलम, हिमालय ने पुकारा, पृष्ट-73
13. उपरिवत_____

सहा. प्राध्यापक-हिन्दी विभाग,
श्री राधाकृष्ण गोयनका महाविद्यालय, सीतामढ़ी, बिहार